गोस्वामी तुलसीदास पर रामानंदी सम्प्रदाय का प्रभाव

- डॉ. अशोक कुमार मीणा

शोध सारांश:- अयोध्या में नवनिर्मित भव्य राम मंदिर के उद्घाटन ने हिंदी साहित्य में 14-15वीं शताब्दी से जारी रामानंदी और रामानुजी सम्प्रदाय के आपसी अन्तर्द्वन्द को फिर से जाग्रत कर दिया है। नि: सन्देह सम्पूर्ण भक्तिकालीन साहित्य शास्त्र और लोक के अन्तर्द्वन्द का साक्षी है। स्वामी रामानन्द ने मर्यादा और शास्त्रबद्ध भक्ति रूपी गंगा को सर्वजनहिताय और सर्वसुलभ बनाया, इसमें कोई संदेह नहीं है। उन्होंने मोक्ष का द्वार सभी के लिए खोला तथा शास्त्रों से जकड़ी भक्तिधारा को सम्पूर्ण भारत में प्रवाहित करने का भगीरथी कार्य किया। गौरतलब है कि किसी भी सम्प्रदाय की पृष्ठभूमि धर्म होती है तथा धर्म की पृष्ठभूमि दर्शन हैं। दर्शन पहले सिद्धांत तय करता है, फिर उस पर धर्म की नींव रखी जाती है। अतः किसी सिद्धांत विशेष के अनुयायियों की अविच्छिन्न परम्परा सम्प्रदाय कहलातीं है।

बीज शब्दः भक्तिकाल, सम्प्रदाय, दर्शन, सिद्धांत, भक्ति, रामानंद

हिंदी साहित्य के इतिहासकारों ने स्वामी रामानन्द के विषय में प्रचलित मिथकों और किवदंतियों से सावधान रहने का उपदेश बहुत पहले ही दे दिया है। यहां विचारणीय है कि इतिहास में कोई किंवदंती तभी व्यापक स्वीकार होती है जब वह तथ्यों और मनोवांछित कल्पना के बीच उपस्थित धुंधली जगह में अपने लिए स्थान बना लेती है। यही कारण है कि हिंदी साहित्य इतिहास में स्वामी रामानन्द और उनके सम्प्रदाय की स्थिति अस्पष्ट परन्तु बहुत ही ' रेडिकल' स्वरूप धारण किये हुए हैं। रामानन्दी सम्प्रदाय ने जहां एक ओर कबीर, रैदास, धन्ना, पीपा, सुरसरी सरीखे निर्गुण संतों को भक्ति का पाठ पढ़ाया, वहीं दूसरी ओर नाभादास, अग्रदास, मीरां जैसे सगुण मत में आस्थावान भक्तों को भी प्रेरणा प्रदान की। रामानन्दीं साधूओं को तीन श्रेणियों में बांटा जा सकता है - बैरागी, रसिक और नागा साधु। रामानंदी नागा साधुओं की सेना ने जहां अयोध्या को विधर्मियों से सुरक्षित रखा और शाक्तों और गुसाईयों से शास्त्र के साथ-साथ शस्त्र युद्ध भी किये, वहीं रसिक अनुयायियों ने तुलसी की मर्यादाबद्ध रामभक्ति को लोकरंजक स्वरूप प्रदान किया है। वस्तुत: सम्पूर्ण भारत में स्थापित 52 रामानंदी द्वारों के कारण ही मध्यकालीन रामभक्ति की सगुण धारा की उस पृष्ठभूमि का निर्माण किया जिस पर गोस्वामी तुलसीदास ने रामभक्ति के विशाल प्रासाद का निर्माण किया।

रामानंदी सम्प्रदायबद्ध साहित्य ने हिंदी साहित्य के इतिहास निर्माण में भक्तिकाल के आरंभिक स्वरूप की भूमिका निभाई है। रामानंदी संम्प्रदाय कई साहित्यिक परंपराओं का अग्रदूत रहा है। इस सम्प्रदाय ने समस्त भक्ति आंदोलन को गहरे तक प्रभावित किया है। कृष्ण भक्ति के बढ़ते प्रभाव के समक्ष रामभक्ति की प्रतिष्ठा में रामानंदी सम्प्रदाय और साहित्य का बहुत बड़ा योगदान है। इस सम्प्रदाय ने जहाँ एक ओर हिंदी भाषा को अखिल भारतीय स्वरूप प्राप्त करने का अवसर दिया वहीं राष्ट्रीय चेतना के उदय को भी आधारभूमि प्रदान की। रामानंदी सम्प्रदाय का साहित्य रामभक्तिधारा को मठों और मंदिरों से बाहर निकाल कर उत्तर भारत के घर-घर में पूज्य स्थिति प्रदान करता है। इसी प्रकार रामानंदी सम्प्रदाय के साहित्य ने तुलसीदास को वह सामाजिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि प्रदान की जिसके द्वारा वे राम कथा के अमर गायक बन सके। हिन्दी साहित्य को रामानंदी सम्प्रदाय द्वारा दिए गए योगदान पर चर्चा करते हुए प्रो. वासुदेव सिंह का मत है कि "स्वामी रामानंद ने देववाणी संस्कृत का मोह त्याग कर लोकवाणी हिन्दी को अपनाया। वस्तुतः सच्चा लोकनायक वहीं होता है जो अपनी बात लोकभाषा में कहें। गौतम बुद्ध ने भी तात्कालीन लोक भाषा पालि में ही अपना उपदेश दिया था और संस्कृत के अधिकारी विद्वान होते हुए भी गोस्वामी तुलसीदास ने लोकभाषा में ही राम कथा कहीं।"[1]

रामानंदी सम्प्रदाय से प्रभावित कवियों में गोस्वामी तुलसीदास का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। स्वामी रामानंद की शिक्षाओं तथा उनके सम्प्रदाय ने गोस्वामी जी को बहुत गहरे तक प्रभावित किया है। कुछ विद्वानों ने उन्हें रामानंद की गुरु परंपरा में माना है, लेकिन तुलसी पर अब तक हुए शोध कार्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि उन्होंने प्रत्यक्षतः रामानंदी संम्प्रदाय में दीक्षा नहीं ली थी। इस सम्बंध में आचार्य रामचंद्र शुक्ल का मत है कि- "तुलसीदासजी रामानंद सम्प्रदाय की वैरागी संम्प्रदाय में नहीं जान पड़ते। उक्त संम्प्रदाय के अंतर्गत जितनी भी शिष्य परंपराये मानी जाती है उनमें तुलसीदास का नाम कहीं नहीं है। रामानंद परंपरा में सम्मिलित करने के लिए उन्हें नरहरी दास का शिष्य बताकर जो परंपरा मिलाई गई है वह कल्पित प्रतीत होती है। ये रामोपासक वैष्णव आवश्य थे, पर स्मार्त वैष्णव।"[2]

[1]मध्यकालीन भक्ति आंदोलन के सूत्रधार स्वामी रामानंद , आलेख प्रो. वासुदेव सिंह , श्री मठ प्रकाश, जनवरी 2001 ई., पृ.सं.-54

[2]हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संस्करण 1970 ई., पृष्ठ सं. 72

स्वयं तुलसीदास ने अपनी रचनाओं में कहीं भी रामानंदी सम्प्रदाय की परंपरा का अनुयायी होने का संकेत नहीं दिया है। लेकिन इतना निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि रामानंदी संम्प्रदाय की दार्शनिक एवं भक्ति संबंधित विचारधारा में तुलसीदास की अटल आस्था थी। तुलसी की भाषा विषयक मान्यता पर रामानंद की लोकभाषा में साहित्य रचना की प्रेरणा का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। संस्कृत के प्रकांड पंडित होते हुए भी तुलसी ने ठेठ अवधी तथा ब्रज भाषा में काव्य रचना की है। उन्होंने रामचरित मानस (1574 ई.) द्वारा अवधी भाषा को साहित्यिक स्वरूप प्रदान किया। खड़ी बोली के प्रोत्साहन का जो कार्य स्वामी रामानंद ने आरंभ किया था, वह तुलसी की रचनाओं में पूर्णता प्राप्त करता है। नाभादास ने 'भक्तमाल' में तुलसी को वाल्मिकी का अवतार माना है। नाभादास और तुलसीदास दोनों समकालीन थे तथा प्रियादास की भक्तमाल पर लिखी गई 'भक्तरस बोधिनी टीका' के अनुसार दोनों की वृंदावन में मुलाकात भी हुई थी। तुलसी की रामभक्ति पद्धति रामानंदी भक्ति पद्धति से मेल खाती है। रामानंद सम्प्रदाय में विष्णु को राम रूप में परब्रह्म मानकर उनके सगुण रूप की उपासना प्रचलित है। इस सम्प्रदाय में राम को सर्वशक्तिमान, सृष्टि का रचियता, पालक, संहारक तथा प्रेम द्वारा प्राप्य माना गया है। तुलसी ने भी अपने आराध्य राम को सर्वव्यापी, स्वयंप्रकाश, अविनासी, नित्य तथा जगत का सृष्टा माना है। तुलसी के राम भी प्रेम द्वारा सहज प्राप्त हो जाते है-

'हरि व्यापक सर्वत्र समाना। प्रेम ते प्रकट होहि भगवाना।।
देसकाल दिसि विदि सहु माहि। कहहु सो कहां जहां प्रभू नाहीं।।'
अग जगमय सब रहित विरागी। प्रेम ते प्रभु प्रकटै जिमि आगी।"[3]

जिस प्रकार रामानंद सम्प्रदाय में ब्रह्म शब्द दशरथ पुत्र राम का बोधक है, उसी प्रकार तुलसी ने भी ब्रह्म का प्रयोग श्रीराम के लिए किया है-

"जेहि इमि गावहि वेद बुध। जाहि धरहि मुनि ध्यान।
सोई दशरत सुत भगत हित। कोसल पति भगवान।।"[4]

रामानंदी सम्प्रदाय चूंकि वैष्णव सम्प्रदाय है, अतः इस सम्प्रदाय के आराध्य राम भगवान विष्णु के अवतार माने गये है। विष्णु को राम रूप में इसी सम्प्रदाय ने लोक प्रचलित किया है। तुलसीदास ने विष्णु के रामरूप में अवतार को अपना आराध्य माना है-

[3]रामचरित मानस (बाल काण्ड), संपादक माता प्रसाद, हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, संस्करण 1949 ई., पृष्ठ सं. 93

[4]रामचरित मानस (बाल काण्ड), संपादक माता प्रसाद, हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद , संस्करण 1949 ई., पृष्ठ सं. 63

"विष्णु जो सुर हित नर तनुधारी। सोउ सर्वज्ञ जथा त्रिपुरारी।
खोजे सो कि अज्ञ इव नारि। ज्ञान धाम श्रीपति असुरारी।।"[5]

रामानंद रचित कही जाने वाली 'रामअष्टक' नामक कृति में विष्णु रूप में राम अवतार को पूर्ण ब्रह्म निर्दिष्ट किया गया है-

'दशरथ नंदन असुर गंजन। श्रीराम जीव पूरन पुरुष है।
ब्रह्मा, बिस्नु, महेस, नारद कोटि अठासी देवता ।
इंद्रादिक सनकादि गावहि श्रीराम जी पुरन ब्रह्म है।।'[6]

स्पष्ट है कि रामानंदी सम्प्रदाय की रामअवतार की उपासना ने तुलसीदास के मानस निर्माण में बहुत योगदान दिया है। रामानंद की राम के सगुण और निर्गुण दोनों रूपों में आस्था के अनुरूप ही तुलसीदास ने भी राम के दोनों रूपों में अपनी श्रद्धा प्रकट की है। उन्होंने हेय गुणों से रहित (निर्गुण) तथा दिव्य गुणों से युक्त (सगुण) राम को अपना अराध्य माना है -

"कोउ ब्रह्म निर्गुन ध्याव। अव्यक्त जेहि श्रुति गाव।
मोहि भाव कोसल भूप। श्रीराम सगुन सरूप।।"[7]

रामानंदी सम्प्रदाय की दार्शनिक मान्यता के अनुसार जगत को ब्रह्म का अंश तथा नित्य माना जाता है। राम इस जगत के कारण है। अतः जगत माया रूप में न होकर प्रभु की इच्छा का प्रसाद है। तुलसी ने भी ऐसा ही कहा है -

"जगत प्रकास्य प्रकासक रामू । मायाधीश ग्यान गुन धामू।
जासु सत्यता ते जड़ माया। भास सत्य इवं मोह निकाया।"[8]

यद्यपि गोस्वामी तुलसीदास कट्टर मर्यादावादी थे तथा कार्यक्षेत्रों के प्राचीन विभाग के पूरे समर्थक थे।[9] फिर भी उन्होंने राम भक्ति के क्षेत्र में सबको बराबर माना है। उनके अनुसार राम से जाँति-पाँति से परे केवल भक्ति का ही नाता सत्य है-

"जाति-पाँति कुल धर्म बड़ाई। धनबल परिजन गुन चतुराई।

[5]रामचरित मानस (बाल काण्ड) , संपादक माता प्रसाद, हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, संस्करण 1949 ई., पृष्ठ सं. 30

[6]रामअष्टक, स्वामी रामानंद, आर्य भाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारणी सभा, वाराणसी, हस्तलेख संख्या 951,पृष्ठ सं. 38

[7]रामचरित मानस (लंका काण्ड) , संपादक माता प्रसाद , हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद , संस्करण 1949 ई. , पृष्ठ सं. 479

[8]रामचरित मानस (बाल काण्ड) , संपादक माता प्रसाद , हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद , संस्करण 1949 ई., पृष्ठ सं. 463

[9]गोस्वामी तुलसीदास, आचार्य रामाचंद्र शुक्ल, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, संस्करण 2004 ई.,पृष्ठ सं. 47

भक्ति हीन नर सोहइ कैसा। बिनु जल वारिद देखिय जैसा।।"[10]

रामानंदी सम्प्रदाय की 'जाँति-पाँति पुछे नहिं कोई, हरि को भजे सो हरी का होई.... धारणा को तुलसीदास ने आंशिक रूप में ही ग्रहण किया है। उन्होंने वर्णाश्रम व्यवस्था का पूर्ण सर्मथन किया है। रामानंदी सम्प्रदाय की सामाजिक मान्यताओं के विपरीत तुलसीदास ने शुद्रों व स्त्रियों के सीमित अधिकारों का समर्थन किया हैं। लगता है कि तुलसी दार्शनिक एवं साधना मार्ग में तो रामानंदी सम्प्रदाय से प्रभावित थे, लेकिन सामाजिक क्षेत्र में परंपरागत भारतीय वर्णाश्रम व्यवस्था के समर्थक थे। तुलसी के राम को ब्राह्मणों से विशेष मोह है-

"सापत ताड़त पुरुष कहन्ता। विप्र पूज्य अस गावहि संता।
पुजिय विप्र सील गुन हिना। सूद न गुन गन ज्ञान प्रवीना।।"[11]

नाभादास की भाँति तुलसीदास ने भी रामभक्त हनुमान को राम का आदर्श भक्त माना है तथा "राम ते बड़कर राम के दासा" कह कर रामानंदी हनुमान उपासना में अपनी आस्था प्रकट की है। रामानंदी सम्प्रदाय में सीता जी का विशिष्ट स्थान है। सम्प्रदाय की मान्यता के अनुसार श्रीराम ने प्रथम सीताजी को ही मंत्र दिया था। अतएव इस सम्प्रदाय में सीता जी राम मंत्र की प्रवर्तिका मानी जाती है। रामानंदी सम्प्रदाय में बिना सीता की कृपा के प्रपत्ति संभव नहीं मानी जाती है। इस सम्प्रदाय में सीता की कृपा से ही जीव भगवान को प्राप्त कर पाता है। तुलसीदास सीता विषयक रामानंदी मान्यता से पूर्णता प्रभावित थे। उन्होंने 'रामचरित मानस' तथा 'विनय पत्रिका' में सीता जी को राम कृपा का माध्यम मानते हुए उनकी कृपा दृष्टि की कामना की है-

"जानकी जग जननि, जन की कीये बचन सहाई।
तरै तुलसीदास भव तव, नाथ गुन गान गाई।।"[12]

इसी प्रकार जीव विषयक दार्शनिक मान्यता भी तुलसीदास ने रामानंदी सम्प्रदाय के प्रभाव से ग्रहण की है। रामानंदी सम्प्रदाय में जीव ईश्वर की अपेक्षा अज्ञ, चेतन, अज, ईश्वराचीन, भिन्न-भिन्न देहों में भिन्न-भिन्न स्वकर्मफल भोक्ता, ज्ञान स्वरूप, अणु परिमाण वाला, देह इंद्रियों से अपूर्व, नित्य एंव स्वप्रकाशमय माना गया है। जीव और भगवान में शेष-शेषी सम्बंध इस सम्प्रदाय में माना जाता है अर्थात भगवान शेषी है ओर जीव उनका शेष। भगवान ही जीवों के एकमात्र उपाय

[10]रामचरित मानस (बाल काण्ड), संपादक माता प्रसाद, हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, संस्करण 1949 ई., पृष्ठ सं. 345

[11]रामचरित मानस (अरण्य काण्ड), संपादक माता प्रसाद, हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, संस्करण 1949 ई., पृष्ठ सं. 344-345

[12] विनय पत्रिका, गोस्वामी तुलसीदास, गीता प्रेस, गोरखपुर, संस्करण - 2003 ई., पृष्ठ सं. 41

है तथा प्रपत्ति द्वारा ही संसार के बंधनों से जीव की मुक्ति संभव है। जीव और भगवान में नौ प्रकार के सम्बंध इस सम्प्रदाय में माने जाते है।[13] यद्यपि तुलसीदास ने जीव भेद निरूपण का विशेष प्रयास नहीं किया है लेकिन उनकी आस्था सेव्य-सेवक भाव में अधिक रही है। ईश्वर एंव जीव के आपसी सम्बंध में तुलसी ने अद्वैतवाद तथा विशिष्टाद्वैतवाद का सुंदर समन्चय किया है "जीव अनेक एक श्रीकन्ता, परवश जीव स्ववश भगवन्ता" कहकर जहाँ उन्होंने जीव और भगवान में अंतर माना है, वहीं "ईश्वर अंश जीव अविनासी, चेतन अमन सहज सुख राशि" लिखकर ब्रह्म और जीव की अभिन्नता स्वीकार की है। रामानंदी सम्प्रदाय की ही भाँति तुलसीदास ने प्रतत्ति द्वारा जीव की मुक्ति संभव मानी है-

"सोई जानइ जेहि देहु जनाई। जानत तुम्हहिं तुम्हहिं होई जाई ।
तुम्हारी कृपा तुम्हहिं रघुनन्दन। जानहिं भगत भगत उर चंदन।।"[14]

रामानंदी सम्प्रदाय में प्रकृति को अचेतन एंव ईश्वर अंश माना गया है। प्रकृति सम्बंधी तुलसी की मान्यता भी अद्वैतवाद की ओर झुकी हुई प्रतीत होती है। उन्होंने प्रकृति को माया कहा है तथा जगत को माया स्वरूप मिथ्या माना है -

"उमा कहहुँ मैं अनुभव अपना। सत हरि भजन जगत सब सपना।"[15]

गोस्वामी तुलसीदास ने रामानंद सम्प्रदाय की राम सम्बंधी प्रमुख धारणाओं को स्वीकार अवश्य किया है, लेकिन उन्होंने विशिष्टाद्वैत मत में पूर्ण विश्वास प्रकट नहीं किया है। तुलसी की साधना समन्वय की साधना है। अतएव उन्होंने अपने समय में प्रचलित सभी दार्शनिक मतों के समन्वित स्वरूप को अपनाया है। उन्होंने रामानंदी सम्प्रदाय की मान्यताओं को साम्प्रदायिक रूप से नहीं, बल्कि राम भक्ति के दार्शनिक पक्ष के रूप में आंशिक रूप से ही ग्रहण किया है। उन्होंने कहीं भी कर्म- काण्डों का उल्लेख नहीं किया है, क्योंकि उनकी भक्ति पद्धति आंतरिक भाव पर आधारित है। उन्होंने रामानंदी सम्प्रदाय से सगुण राम भक्ति साधना मार्ग को ग्रहण करते हुए उसे युगानुकूल बनाया है। रामानंदी सम्प्रदाय में आज भी तुलसी की रामचरितमानस को सम्प्रदाय के मानक ग्रंथ की स्थिति प्राप्त है। स्पष्ट है कि तुलसीदास ने रामानंदी सम्प्रदाय के प्रभाव स्वरूप ही सगुण रामभक्ति मार्ग को रामचरितमानस के माध्यम से लोकप्रिय बनाया है। पीटर वान डेयर विर का

[13] रामानंद की हिंदी रचनाए, सम्पादक-डॉ. पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संस्करण 1995 ई., पृष्ठ. सं. 12

[14]रामचरित मानस (अरण्य काण्ड), संपादक माता प्रसाद, हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, संस्करण 1949 ई., पृष्ठ सं. 232

[15] रामचरित मानस (अरण्य काण्ड), संपादक माता प्रसाद, हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, संस्करण 1949 ई., पृष्ठ सं. 312

मानना है कि "यद्यपि तुलसीदास स्वय रामानंद सम्प्रदाय में नहीं थे, लेकिन उनकी रामचरित मानस की प्रसिद्धी का श्रेय 16वीं शताब्दी में राजस्थान तथा उत्तरी भारत में फैले हुए रामानंदीयों को जाता है।"[16]

तुलसीदास स्वामी रामानंद के साधना मार्ग को आधार मानकर ही रामकथा को उत्तर भारत के घर-घर में स्थान दिलाते है। पं. परशुराम चतुर्वेदी का भी मानना है कि "उन्होंने (रामानंद) एक ऐसे इष्टदेव की कल्पना की जो सर्वसाधारण के लिए भी कल्याणकारी प्रतीत हो सके। उन्होंने एक ऐसी सर्वसुलभ उपासना भी चलाई जिसके अधिकारी मनुष्य मात्र तक समझे जा सकें। उनकी इस विशेषता को ही आधार स्वरूप ठहरा कर पीछे तुलसीदासजी ने अपने अपूर्व ग्रंथ रामचरितमानस की रचना की जो कम से कम हिंदू जाति के लिए अपने आदर्श पारिवारिक जीवन का पथ प्रदर्शक बन गया।"[17]

रामानंदी सम्प्रदाय की रसिक शाखा ने रामभक्ति के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। संपूर्ण रामभक्ति साहित्य के लगभग दो तिहाई भाग की रचना इसी शाखा द्वारा हुई है। रामानंद के शिष्य अग्रदास से रामभक्ति में रसिकोपासक शाखा का आरंभ माना जाता है। इस रसिक शाखा ने जहाँ एक ओर परम्परागत रामभक्ति काव्य धारा को हिन्दी में प्रवाहित करने का कार्य किया, वहीं दूसरी ओर नवीन स्फूर्ति के साथ रामभक्ति का जनता में प्रसार भी किया है। रसिक साधकों के संपर्क तथा उनके परिष्कृत साहित्य सर्जन से तात्कालिक शासक वर्ग भी रामभक्ति के प्रचार-प्रसार में योगदान देने लगा था। गलता पीठ के आचार्यों का शिष्यत्व तात्कालिक शासक वर्ग स्वीकार कर चुका था। परिणामस्वरूप राजकीय संरक्षण में राम कथा से जुड़े कई व्रत, त्योहार, लीलायें आदि मनाई जाने लगी। इससे अशिक्षित जनता ने भी रामकथा को अपने मानस में पुज्य स्थिति प्रदान की। इन रसिक साधकों ने मर्यादाबद्ध राम भक्ति के साथ-साथ राम की श्रृंगारिक लीलाओं के प्रदर्शन का भी सूत्रपात किया। तुलसी के पूर्व भी रसिक साधकों के कारण जनता में रामचरित्र का प्रदर्शन विविध रूपों में प्रचलित था। मानदास के नाटकों तथा मुरारिदास एवं प्रयागदास ने रासरूप में जनता में व्यापक स्तर पर रामचरित्र को प्रचारित कर दिया था। रसिक संम्प्रदाय मे राम की माधुर्य लीलाओं में रामरास, रामविवाह, वसंत, फाग, झूला, आदि प्रमुख रूप से प्रदर्शित किए जाते थे। इस प्रकार की लीलाओं के आयोजन से रामभक्ति में जनसामान्य की अभिरूचि का

[16]अमेरिकन एथनॉलॉजिस्ट, पिटर वान डेयर विर, संस्करण 16 अगस्त 1989 ई., पृष्ठ सं. 462

[17] उत्तर भारत की संत परंपरा, पं. परशुराम चतुर्वेदी, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, संस्करण 1951 ई., पृष्ठ सं. 214

बढ़ना स्वाभाविक ही था। कहा जाता है कि रामानंदी साधकों से प्रेरणा पाकर ही तुलसीदास ने काशी में संपूर्ण रामलीला का तथा जैरामपुर (सीतापुर) में रामविवाह लीला का प्रदर्शन कराया था।"[18]

कहना न होगा कि इन रसिक साधकों ने राम चरित्र को रामलीलाओं के माध्यम से उत्तर भारतीय जनता के समक्ष रखा तथा जनता में राम भक्ति के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उत्तर भारत में रसिक साधकों ने रामभक्ति को वह स्तर प्रदान कर दिया था कि स्त्री-पुरूषों का नामकरण भी राम-सीता के नाम पर किया जाने लगा तथा विवाह, विदाई, उत्सवों आदि में राम कथा पर आधारित लोकगीतों को गाया जाने लगा। उत्तर भारत में राम नाम को परस्पर अभिवादन के रूप में प्रतिष्ठा मिली। यहाँ तक की निर्गुण राम को मानने वाले संत समाज में भी राम का नाम आदर पूर्वक अभिवादन स्वरूप लिया जाता है। तुलसी के रामचरित मानस पर टीकाओं की शुरुआत रामानंदी संप्रदाय की रसिक शाखा से ही मानी जाती है। रामचरित मानस के प्रथम टीकाकार रसिकाचार्य रामचरणदास रसिक शाखा के ही अनुयायी थे। वस्तुतः इन रसिक साधकों ने रामभक्ति साहित्य अपने साम्प्रदायिक सिद्धांतों के अनुरूप भले ही रचा हो लेकिन इनका उद्देश्य अपनी शाखा को सशक्त शास्त्रीय व लोकोन्मुख स्वरूप प्रदान करना भी था। ज्ञातव्य है कि रसिक साधकों ने रामकथा की सुख लीलाओं का ही वर्णन किया है, वन गमन तथा राम कथा के अन्य मार्मिक प्रसंगों उपेक्षा की है। यही कारण है कि रसिक शाखा द्वारा रचित साहित्य प्रबंधात्मक शैली की अपेक्षा मुक्तक शैली में अधिक लिखा गया है। मुक्तक गीतों के रूप में रसिकों ने लगभग सभी प्रचलित छंदों में रचनाएँ की है। श्रृंगार लीलाओं के प्रदर्शन से तात्कालिक समय में लोकगीतों और संगीत कला को प्रोत्साहन मिला। रसिक शाखा में संगीत के महत्व को रेखांकित करते हुए डॉ. भगवती प्रसाद सिंह ने लिखा है कि "रसिक साधना में सखी भाव के उपासक संगीत सेवा को बड़ा महत्व देते है। युगल सरकार की मुख्य सखियों में श्री चारुशीलाजी की वीणा सेवा और चंद्रकलाजी की मृदंग सेवा प्रसिद्ध है। उनके उपासक इसीलिए संगीत के प्रेमी होते है। महात्मा रामप्रसाद अपनी सेवा वीणा की ही मानते थे। सख्यभावोपासकों में रामसखे तथा श्यामसखे संगीत के प्रसिद्ध आचार्य हुए है। इनकी पदावलियाँ राग-रागिनियों की अद्भुत कोष है। इस संगीत प्रियता से रामकाव्य में गेय पदों की रचना में अभूतपूर्व विकास हुआ।"[19]

[18] रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय, भगवती प्रसाद सिंह, अवध साहित्य मंदिर, बलरामपुर, संस्करण 1957 ई., पृष्ठ सं. 551

[19] रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय, भगवती प्रसाद सिंह, अवध साहित्य मंदिर, बलरामपुर, संस्करण 1957 ई., पृष्ठ सं. 360

इस प्रकार निःसंकोच कहा जा सकता है कि तुलसीदास की प्रेरणा और प्रसिद्धि का मूल आधार रामानंद सम्प्रदाय ही है। इस सम्प्रदाय की रामभक्ति को तुलसीदास ने पूर्णता प्रदान की है। जैसा की डॉ. भगवती प्रसाद सिंह ने कहा है "यदि रामावत सम्प्रदाय के प्रवर्तन का श्रेय स्वामी रामानंद को है, तो जन-जन तक उनका संदेश पहुँचा कर लोकमानस में राम भक्ति की प्रतिष्ठा व राम चरित के प्रति श्रद्धा का भाव जागृत करना तुलसी का ही काम था। "[20]

सहायक ग्रंथ सूची

- सिंह, योगेन्द्र प्रताप, कबीर सूर और तुलसी, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण, 2002 ई.
- शुक्ल, आचार्य रामचंद्र, गोस्वामी तुलसीदास, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, संस्करण, 2004 ई.
- गुप्त, माता प्रसाद, तुलसीदास, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण, 2002 ई.
- सं.वंशी, डॉ. बलदेव, पूरा कबीर, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली संस्करण, 2002 ई.
- मिश्र, शिव कुमार, भक्ति काव्य और लोकजीवन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण, 2002 ई.
- सं. सिंह, गोपेश्वर, भक्ति आंदोलन के सामाजिक आधार, भारतीय प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली,संस्करण, 2002 ई.
- सिंह, भगवती प्रसाद, रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय, अवध साहित्य मन्दिर, बलरामपुर, संस्करण, 1957 ई.
- प्रजापति, डॉ. आर.एस., रामानन्द सम्प्रदाय और साहित्य, प्रगति प्रकाशन, आगरा, संस्करण 1984 ई.
- श्रीवास्तव, डॉ. बदरीनारायण, रामानन्द सम्प्रदाय और हिन्दी साहित्य पर उसका प्रभाव, हिन्दी परिषद्, प्रयाग विश्वविद्यालय, संस्करण 1958 ई.
- संपा. - लाहोटी, वीना, राजस्थान का संत-साहित्य, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, संस्करण, 2002 ई.
- संपादक- सिंह, डॉ. उदय प्रताप, रामानंद राम रस माते, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, मध्यप्रदेश सरकार, संस्करण 2006 ई.
- भण्डारकर, डॉ. आर. जी., वैष्णव, शैव एंव अन्य धर्म, इंडोलॉजिकल बुक हाउस, वाराणसी, संस्करण 1971 ई.
- मोहम्मद, डॉ. मलिक, वैष्णव भक्ति आंदोलन का अध्ययन, राजपाल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण, 1971 ई.
- चतुर्वेदी, पं. परशुराम, वैष्णव धर्म, विवेक प्रकाशन, इलाहाबाद संस्करण, 1953 ई.
- संपादक -पाण्डेय, डॉ. सुधाकर, स्वामी रामानन्द के शिष्य और उपलब्धि, श्रीमठ पंचगंगाघाट, काशी, संस्करण, जनवरी 2006 ई.

[20]रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय, भगवती प्रसाद सिंह, अवध साहित्य मंदिर, बलरामपुर, संस्करण 1957 ई., पृष्ठ सं. 66

- चतुर्वेदी, पं. परशुराम, संत काव्य, किताब महल प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण, 1970 ई.
- सं.- चतुर्वेदी, परशुराम, हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास भाग चार, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, संस्करण, 1996 ई.
- माहेश्वरी, डॉ. प्रेमचंद , हिन्दी रामकाव्य का स्वरूप और विकास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण, 1983 ई.
- शुक्ल, आचार्य रामचंद्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संस्करण, 1970 ई.
- सं.- बड़थ्वाल, डॉ. पीताम्बर दत्त , रामानंद की हिंदी रचनाएँ, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संस्करण 1995 ई.

डॉ. अशोक कुमार मीणा,

सहायक प्रोफेसर (हिन्दी विभाग), राम लाल आनंद महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली-21 मो.- 9891639251, Email - ashokmeenajnu@gmail.com